शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 सितम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

आलोचकों की दृष्टि में गोदान

डॉ. कुमारी सीमा
सहायक प्रोफेसर
हिंदी विभाग
एस.एन.एस.आर.के.कॉलेज
सहरसा, बिहार, भारत

शोध संक्षेप

हिन्दी साहित्य जगत में गोदान का अद्‌वितीय स्थान है। सन् 1936 में प्रकाशित गोदान आरंभ से ही हिन्दी आलोचना के केन्द्र में रहा है। हिन्दी के अनेक आलोचकों ने अलग-अलग दृष्टियों से गोदान का मूल्यांकन किया है। गोदान को सभी आलोचकों ने एक स्वर में कृषक जीवन की करुण गाथा को अभिव्यक्त करने वाला उपन्यास माना है। बावजूद उपन्यास में शहरी कथा की प्रासंगिकता, इसकी विषय वस्तु, उद्देश्य, इसकी महाकाव्यात्मकता और प्रेमचन्द के दलित एवं नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण को लेकर आलोचकों के बीच अलग-अलग राय है, मतभेद हैं। इन मतभेदों को लेकर गोदान के ऊपर अनेक शोधकार्य हो चुके हैं। अब भी हो रहे हैं। गोदान एक ऐसी कृति है, जिसे पढ़ने के बाद इसका हर बार एक नया पहलू सामने आता है। इस शोध पत्र में आलोचकों के गोदान के सम्बन्ध में मतभेदों पर चर्चा की गई है।

गोदान में गाँव और शहर

गोदान में प्रेमचन्द ने गाँव और शहर की कथा को एक साथ पिरोया है। ऐसा इसलिए कि वे गाँव और शहर दोनों सांस्कृतिक इकाइयों को औपनिवेशिक साम्राज्यवाद और पूंजीवाद के आर्थिक बिन्दु पर मिलाकर पूरे भारतीय परिदृश्य को उजागर करना चाहते हैं। नई साम्राज्यवादी व्यवस्था में धीरे.धीरे दम तोड़ता किसान होरी और किसान से मजदूर होता गोबर गाँव और शहर के बीच आर्थिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं। हालाँकि कुछ आलोचक गोदान को ग्रामीण किसान की कथा मानते हुए शहरी कथा को अनावश्यक मानते हैं।

गोदान के दोहरे कथानक पर सबसे पहले जैनेन्द्र कुमार ने अपने लेख 'प्रेमचन्द का गोदान यदि मैं लिखता' में प्रश्नचिह्न लगाया। इस लेख का महत्त्व दो कारणों से है, पहला यह कि प्रेमचन्द के सामने ही जैनेन्द्र ने उनकी आलोचना की और दूसरा यह कि उन्होंने अपनी अलग रचनात्मक दृष्टि से गोदान का मूल्यांकन किया। गोदान के चरित्र, कथानक विस्तार की बात कहकर उन्होंने प्रेमचन्द के कथानक में बिखराव की ओर महत्त्वपूर्ण संकेत किया है। उनका मानना था कि प्रेमचन्द कई बार कथानक.विस्तार के लोभ का संवरण नहीं कर पाते। इससे कथानक की कसावट ढीली हो जाती है। विस्तार होने पर भाव कम हो जाता है। जैनेन्द्र कुमार की राय है कि अगर मैं गोदान लिखता तो इसमें इतने पृष्ठ नहीं होते और न ही इतने ज्यादा पात्र। पात्रों की इतनी विपुल संख्या पर जैनेन्द्र को विस्मय होता है। उनका कहना है कि मैं महज दो.चार पात्रों से काम चला लेता। गोदान में गाँव की कथा पर

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 सितम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

शहरी कथा के थोपे जाने की बात भी उन्होंने की है। जैनेन्द्र लिखते हैं, "गाँव की कथा पर उसमें शहर कुछ थोपा हुआसा है, वह अनिवार्य नहीं है, पुस्तक की कथा के साथ एक नहीं है। ... हठात् शहर ने आकर पुस्तक के गाँव को चमकाया नहीं है, बल्कि कहीं कुछ बिखरने और ढकने का प्रयास किया है, ऐसा प्रतीत हुआ।"[1]

नन्ददुलारे वाजपेयी ने भी गोदान की शहरी कथा को अप्रासंगिक माना है। उन्होंने अपने लेख 'गोदान' में कुछ प्रश्न उठाए हैं, जिनमें पहला है. ग्रामीण कथा में नागरिक कथा किस उद्देश्य से जोड़ी गई है ?[2] इस प्रश्न की खोज करते हुए वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि गोदान उपन्यास के ग्रामीण और नगरीय कथा में वास्तविक ऐक्य की कमी है। वे लिखते हैं, "गोदान के नागरिक और ग्रामीण पात्र एक बड़े मकान के दो खण्डों में रहने वाले दो परिवार के सामान हैं, जिनका एक-दूसरे के जीवन-क्रम से बहुत कम सम्पर्क है। वे कभी-कभी आते-जाते मिल लेते हैं और कभी-कभी किसी बात पर झगड़ा भी कर लेते हैं, परन्तु न तो उनके मिलने में और न झगड़े में ही कोई ऐसा सम्बन्ध स्थापित होता है, जिसे स्थायी कहा जा सके।"[3]

नन्ददुलारे वाजपेयी का मानना है कि गोदान में नागरिक और ग्रामीण पात्र दो स्वतन्त्र उद्देश्य को लेकर चलते हैं। जबकि गोदान का उद्देश्य सिर्फ कृषक जीवन के मार्मिक पहलू का वर्णन करना था। उनका मानना है कि शहरी कथा से गोदान के मूल उद्देश्य में बाधा उत्पन्न होती है।

इन्द्रनाथ मदान का मानना है कि गोदान में नगर-कथा इसका अभिन्न अंग नहीं है, बाहर की चीज है, मैल है, जिसे धोया जा सकता है और आसानी से इसको उपन्यास से बाहर निकाला जा सकता है। अपनी इस मान्यता के साथ उन्होंने नन्ददुलारे वाजपेयी की मान्यता को दुहराया लेकिन बाद में इन्द्रनाथ मदान ने यह माना कि उनका मत अतिरंजित है। और भूल सुधार करते हुए यह जोड़ा कि देहात और शहर की कथा एक-दूसरे की पूरक है और उपन्यास की संरचना के मूल में है।

गोदान में शहरी कथा की प्रासंगकिता को लेकर रामविलास शर्मा का मत जैनेन्द्र, नन्ददुलारे वाजपेयी और इन्द्रनाथ मदान से भिन्न है। वे अपनी पुस्तक 'प्रेमचन्द और उनका युग' में लिखते हैं, "गोदान के वर्णन और चित्रण में एक अपूर्व आत्मीयता और तल्लीनता है जो प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी कम मिलती है।"[4]

रामविलास शर्मा का मानना है शहरी कथा ग्रामीण कथा की पूरक है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व सम्भव नहीं है। वे लिखते हैं, "एक तरफ जमींदार रायसाहब, मिल मालिक खन्ना, मालती और मेहता की दुनिया है, दूसरी तरफ होरी, धनिया, गोबर, सोभा, हीरा वगैरह की दुनिया है। एक के बिना दूसरी का अस्तित्व संभव नहीं है, यानी अपने वर्तमान रूप में। इसलिए प्रेमचन्द इन दोनों संसारों के चित्र खींचते हैं। इस चित्रण में जहाँ होरी और उसके भाई-बंदों के लिए उनकी सहृदयता और गहरी हो गई है, वहाँ रायसाहब खन्ना संप्रदाय के लिए उन्होंने अपना व्यंग्य और भी पैना, और भी मर्म पर चोट करनेवाला बना लिया है।"[5]

रामविलास शर्मा का मानना है कि प्रेमचन्द ने शहरी कथा का वर्णन औपनिवेशिक शोषण तन्त्र को गहराई से दिखाने के लिए किया है। उनका मानना है कि जिस महाजनी प्रथा के तहत किसानों का शोषण हो रहा है, उसकी जड़ें उसे दिखाई नहीं दे रही हैं। वे लिखते हैं, "महाजनी प्रथा ठीक है, व्यापक है, उसे पालने-पोसने वाली

शक्ति किसान को दिखाई नहीं देती।"[6] वे गोदान के बारे में लिखते हैं, "साम्राज्यवादी शोषण के इस रूप को इतने विस्तार और इतने मर्मस्पर्शी ढंग से उजागर करनेवाला हिन्दी में और कोई उपन्यास नहीं है।"[7]

नलिन विलोचन शर्मा का मानना है कि गोदान की शहरी और ग्रामीण कथा के बीच से भारतीय जीवन की विशाल धारा बहती है। वे लिखते हैं, "गोदान की असम्बद्ध-सी दीख पड़ने वाली दोनों कहानियों के बीच से भारतीय जीवन की विशाल धारा बहती चली जाती है। भारतीय जन जीवन का, जो एक ओर नागरिक है, और दूसरी ओर ग्रामीण और जो एक साथ प्राचीन भी है और जागरण के लिए छटपटा रहा है, इतने बड़े पैमाने पर इतना यथार्थ चित्रण हिन्दी में ही क्यों, किसी भी भारतीय भाषा के किसी उपन्यास में नहीं हुआ है।"[8]

गोपाल राय अपनी पुस्तक 'गोदान : नया परिप्रेक्ष्य' में गाँव की केन्द्रीय कथा के साथ शहर की कथा की प्रासंगिकता के अलग-अलग पहलुओं पर विस्तार से चर्चा करते हैं। वे इसके पीछे के कई कारण बताते हैं। वे यह मानते हैं कि प्रेमचन्द ने गोदान में शहरी कथा को कई उद्देश्यों के लिए जोड़ा है, जैसे. अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए ग्राम जीवन के साथ-साथ नगर जीवन की झाँकी प्रस्तुत करने के लिए, सामन्ती और पूँजीवादी शोषण के गठजोड़ को दिखाने के लिए, शहरी जीवन में व्याप्त मूल्यहीनता को दिखाने के लिए आदि। गोपाल राय का मानना है कि शहरी कथा में अनेक ऐसे प्रसंग हैं, जिनका कलागत औचित्य संदिग्ध है। वे शहरी कथा के बारे में लिखते हैं, "प्रेमचन्द ने गोदान में ग्रामेतर कथा की योजना अपने विचारों और आदर्शों को व्यक्त करने, ग्राम जीवन की तुलना में नगर जीवन तथा कृषक जीवन के सामान्तर उच्च तथा मध्यवर्गीय नागरिक जीवन को प्रस्तुत करने के लिए की है। कृषक और मजदूर जीवन का तुलनात्मक चित्र भी प्रस्तुत किया गया है। पर यह कथा अनुभव की प्रामाणिकता, कलात्मक संगति तथा औचित्य से युक्त न होने के कारण दोषपूर्ण हो गई है।"[9]

शहरी जीवन के औचित्य को संदिग्ध मानने के बावजूद गोपाल राय गोदान को ग्राम जीवन और कृषि संस्कृति का महाकाव्य मानते हैं। वे गोदान को ग्राम जीवन और कृषि संस्कृति को सम्पूर्णता में अभिव्यक्त करने वाला अद्‌वितीय उपन्यास मानते हैं। वे लिखते हैं, "ग्रामीण जीवन और संस्कृति के अंकन की दृष्टि से इस उपन्यास का वही महत्त्व है जो मध्यकाल में युग जीवन की अभिव्यक्ति की दृष्टि से महाकाव्यों का हुआ करता था।"[10]

गोदान और महाकाव्य

किसी उपन्यास को जब भी महाकाव्य की संज्ञा दी जाती है तो इसका संदर्भ युग जीवन के समग्र चित्रण से होता है। महाकाव्य सामन्तवादी समाज की उपज था तो उपन्यास पूँजीवादी समाज की उपज है। गोपाल राय लिखते हैं, "मरते हुए महाकाव्य के गर्भ से ही उपन्यास का जन्म हुआ है। महाकाव्य सामन्तवादी समाज-व्यवस्था और संस्कृति का श्रेष्ठतम काव्य रूप था। सामन्ती समाज-व्यवस्था और संस्कृति के ह्रास के साथ.साथ महाकाव्य भी क्रमशः मरता गया और उसका स्थान उपन्यास लेता गया। सर्वप्रथम पूँजीवादी अर्थव्यवस्था ने उपन्यास विधा को जन्म दिया।"[11]

उपन्यास और महाकाव्य के बीच साम्य-वैषम्य के बारे में वे आगे लिखते हैं, "महाकाव्य सामन्ती जीवन और संस्कृति को उसकी समस्त उदात्तता,

सौन्दर्य और समृद्धि के साथ शब्दबद्ध करता था, जबकि उपन्यास पूँजीवादी तथा समाजवादी समाज-व्यवस्था के जीवन और संस्कृति को उसकी समस्त जटिलताओं, अन्तर्विरोधों और उलझी हुई समस्याओं के साथ प्रस्तुत करता है। चित्रण विषय या कथ्य के इस अन्तर के कारण दोनों के रूप में अन्तर आ जाना स्वाभाविक है, पर यह अन्तर विरोधजन्य उतना नहीं है जितना विकासजन्य है।"[12]

गोदान को कुछ आलोचक एक महाकाव्यात्मक उपन्यास मानते हैं तो कुछ इस धारणा से असहमति व्यक्त करते हैं। जो आलोचक गोदान को एक महाकाव्यात्मक उपन्यास मानते हैं, उनकी मान्यता है कि इस उपन्यास में औपनिवेशिक भारत के यथार्थ का समग्रता एवं गहराई में चित्रण हुआ है। हालाँकि लगभग सभी आलोचक इस बात से सहमत हैं कि गोदान में ग्रामीण जीवन की त्रासदी का समग्रता से चित्रण हुआ है।

नन्ददुलारे वाजपेयी गोदान को एक महाकाव्यात्मक उपन्यास नहीं मानते हैं। वे कहते हैं कि उपन्यास और महाकाव्य दो भिन्न विधाएँ हैं और किसी विशेष युग का उद्घाटन करना किसी एक उपन्यास में सम्भव नहीं है। वे गोदान को राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास भी नहीं मानते हैं। इस मान्यता का विरोध वे गोदान उपन्यास के नाम से ही करते हैं। गोदान उपन्यास के नाम को लेकर उनका मानना है कि "उपन्यास का नाम गोदान है, जिससे यह सूचना नहीं मिलती कि यह सम्पूर्ण भारतीय जीवन को चित्रित करने का लक्ष्य रखता है। गोदान नाम से यही भासित होता है कि इसका सम्बन्ध कृषकों के जीवन के किसी मार्मिक पहलू से है और यही वस्तु हम उपन्यास में पाने की सम्भावना रखते हैं। उनका मानना है कि गोदान में न तो महाकाव्य के से औदात्य और उत्कर्ष का समारम्भ आया है और न गहनतम उच्छ्वास का सा सीमित तन्मयकारी प्रभाव ही व्यक्त हो पाया है। लियो टॉल्सटॉय का वार एण्ड पीस जिस तरह रूस का राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास है, नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार वैसा प्रेमचन्द का गोदान नहीं। वे लिखते हैं, "प्रेमचन्द का गोदान एक सीधे-सादे कथानक पर आश्रित है। यह ग्रामीण जीवन के दैन्य और सामाजिक वैषम्य को प्रदर्शित करता है। करुण रस का ही उसमें प्राधान्य है। इस करुण रस प्रधान ग्राम्य चित्रण को राष्ट्रीय जीवन का प्रतिनिधि चित्र नहीं कहा जा सकता। वर्तमान युग का भारतीय राष्ट्र नव.जागृति की अंगड़ाइयाँ लेकर उठ रहा है। उसके जीवन में संघर्ष है, परन्तु उस पर विजय पाने की कामना भी है। उसमें दैन्य और दुःख है परन्तु उनके निवारण का महान् संकल्प भी है। हमारे देश में पिछले समय जो राष्ट्रीय संघर्ष हो रहा था, जिसके परिणामस्वरूप देश को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है, वह अभूतपूर्व था। गोदान में इस सामाजिक उत्थान का कोई निर्देश नहीं है।"[13]

नन्ददुलारे वाजपेयी का मत है कि गोदान पर राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन का बहुत अधिक प्रभाव नहीं दिखता है। इस कारण इसे राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास नहीं कहा जा सकता। लेकिन वे यह भी कहते हैं कि विस्तार में न सही, गहराई में यह उपन्यास युग का प्रतिनिधित्व करता है। उसमें भारतीय जीवन की करुणा होरी के रूप में साकार हो गई है। होरी मानो देश की वास्तविक स्थिति का प्रतिनिधि है। ऐसा कहते हुए भी नन्ददुलारे वाजपेयी की राय है कि गोदान तो केवल भारतीय कृषक की असहाय अवस्था दिखाकर समाप्त हो जाता है। गोदान के अन्त के

बारे में उनकी टिप्पणी है कि प्रेमचन्द ने इस उपन्यास में कोई मार्ग-निर्देश नहीं किया है। नन्ददुलारे वाजपेयी की नजर में प्रेमचन्द प्रत्यक्षवादी लेखक थे। प्रत्यक्षवादी लेखक से उनका तात्पर्य यह है कि आज जो आपने समाचार पत्रों में पढ़ा, कल उसे प्रेमचन्द की कहानियों में पढ़िए। उनका मानना है कि प्रेमचन्द का लेखन सामयिकता की सीमा से बाहर नहीं जाता। इस पर उनकी टिप्पणी है कि समय ने प्रेमचन्द का साथ उतना नहीं दिया, जितना प्रेमचन्द ने समय का साथ दिया है।

गोपाल राय ने नन्ददुलारे वाजपेयी द्वारा गोदान को महाकाव्यात्मक उपन्यास नहीं माने जाने की स्थापना का विरोध करते हुए लिखा है कि नन्ददुलारे वाजपेयी की आलोचना पूर्वग्रह से ग्रस्त है।

महाकाव्य और उपन्यास के सम्बन्ध में नन्ददुलारे वाजपेयी की धारणा युक्तिसंगत नहीं है। वे कहते हैं कि उपन्यास का एक ऐसा प्रकार होता है जो अपनी व्यापकता, गहराई और वैविध्य में महाकाव्य के सदृश होता है। गोपाल राय गोदान को इसी प्रकार का उपन्यास मानने का आग्रह करते हैं।

हालाँकि शम्भुनाथ गोदान को महाकाव्य के सशक्त विकल्प के रूप में देखते हैं। उनका मानना है कि "इसमें महाकाव्य की तरह न जीवन की पूर्णता का आनन्द है, न यह एक ही चरित्र होरी पर केन्द्रित है और न यह विशुद्ध ट्रैजडी है कि होरी की मृत्यु के बाद सब कुछ शेष हो जाता है। हम स्पष्ट तौर पर पाते हैं कि प्रेमचन्द ने गोदान को महाकाव्य के तत्त्वों और करिश्मा से मुक्त कर दिया है। इसमें महाकाव्य के सशक्त विकल्प की तलाश ही नहीं हैए नावेल के पश्चिमी ढाँचे से मुक्ति की कोशिश भी है।"[14]

गोदान में त्रासद तत्व

महाकाव्य का नायक धीरोदात्त होता है जबकि होरी धीरोदात्त नायक नहीं है। वह एक सामान्य पात्र है। रामविलास शर्मा के अनुसार, "होरी हिन्दी कथा साहित्य का सबसे जीवन्त पात्र है अपनी पराजय के कारण नहीं, अपने संघर्ष के कारण।"[15] जीवन-संघर्ष में व्यक्ति हारता है या जीतता है। गोदान के अन्त में ये दोनों स्थितियाँ आती हैं। जहाँ एक ओर वह कहता है.. कौन कहता है वह जीवन-संग्राम में हारा और दूसरी ओर कहता है वह परास्त हुआ। जीवन-संग्राम की यह द्वंद्वात्मकता गोदान में त्रासदी उत्पन्न करती है। नामवर सिंह के अनुसार "गोदान का जो ट्रेजिक विजन है, उसकी यह द्वंद्वात्मकता है।"[16] गोदान में त्रासदी के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए रामविलास शर्मा ने लिखा है कि "केवल दुख सहने से ट्रैजेडी का सृजन नहीं होता है। आदमी दुख सहता है, हारता है, फिर भी लड़ता है, इस संघर्ष से ट्रैजेडी का सृजन होता है।"[17] रामविलास शर्मा का मानना है कि होरी के संघर्ष से ही गोदान में त्रासदी का सृजन होता है।

गोदान में अभिव्यक्त त्रासदी पर विचार करते हुए गोपाल राय ने शेक्सपीयर के मैकबेथ से इसकी तुलना की है और कहा है कि मैकबेथ जैसे महत्त्वाकांक्षा की ट्रेजेडी है, उसी तरह गोदान में भी महत्त्वाकांक्षा की ट्रेजेडी है। मैकबेथ को राज्य की सत्ता की महत्वाकांक्षा है और होरी को गाय की। वे गोदान को ऐसा उपन्यास मानते हैं जिसमें महाकाव्य जैसी व्यापकता और गम्भीरता है तो त्रासदी की तीव्रता और पैनापन भी। वे गोदान को एक रोमांच रहित त्रासदी की संज्ञा देते हैं। गोपाल राय का मत है कि मैकबेथ और गोदान की त्रासदी में मूल अन्तर यह है कि मैकबेथ से पाठकों को सहानुभूति नहीं होती है

लेकिन गोदान के होरी से पाठकों की गहरी सहानुभूति स्थापित हो जाती है।

गोदान में अभिव्यक्त त्रासदी पर प्रो.रामबक्ष का विचार है कि होरी की त्रासदी इसलिए अनिवार्य है क्योंकि वह पुरानी पीढ़ी का किसान है। अपनी पुस्तक प्रेमचन्द और भारतीय किसान में लिखते हैं कि "होरी और गोबर में दो जीवन दृष्टियों का फर्क है। होरी संयुक्त परिवार की चेतना का व्यक्ति है, जबकि गोबर के जीवन में व्यक्तिवाद का प्रवेश होने लगा है। उनके सम्बन्धों के तनाव के कारण दृष्टि सम्बन्धी यही भिन्निता है।"[18] प्रेमचन्द ने बहुत सूक्ष्म तरीके से होरी और गोबर की चेतना में फर्क दिखाया है। हालाँकि होरी की ट्रेजेडी उन्हें ज्यादा आकर्षित करती रही है, पर व्यापक इतिहास बोध के कारण उन्होंने दिखाया है कि गोबर अगला पात्र है। वास्तव में होरी समस्त भारतीय किसानों का प्रतिनिधि नहीं है, बल्कि एक ऐतिहासिक दौर में लुप्त होता हुआ मिटता हुआ भारतीय किसान है। उसकी ट्रेजडी अनिवार्य है।

गोदान में वर्ग संघर्ष

रामविलास शर्मा ने गोदान की मूल समस्या ऋण की समस्या को माना है। शम्भुनाथ ने गोदान में ऋण की समस्या को प्रधान माना है, किन्तु प्रश्न यह है कि ऋण किस लिए लिया जा रहा है ? वे लिखते हैं कि किसान आर्थिक वृद्धि के लिए ऋण नहीं ले रहा है। वह अपनी जीवन शैली को उन्नत करने के लिए ऋण नहीं ले रहा है वह निरन्तर गरीब होता जा रहा है और लगान चुकाने, पिछला सूद चुकाने के लिए ऋण ले रहा है। वह औपनिवेशिक महाजनी सभ्यता के जाल से निकलने की जितनी कोशिश करता है, उसमें उतना अधिक फँसता जाता है।"[19] इसलिए उनका मानना है कि गोदान की समस्या को अलगाव में नहीं, बल्कि औपनिवेशिक महाजनी सभ्यता द्वारा किसानों के जीवन में पैदा किए गए संकट के सन्दर्भ में समझना होगा। इस सभ्यता में शोषक बेहद सतर्क है। रामविलास शर्मा ने इस तथ्य को रेखांकित किया है कि "गोदान में किसानों के शोषण का रूप ही दूसरा है। यहाँ सीधे-सीधे राय साहब के कारिन्दे होरी का घर लूटने नहीं पहुँचते। लेकिन उसका घर लुट जरूर जाता है। यहाँ अंग्रेजी राज के कचहरी-कानून सीधे.सीधे उसकी जमीन छीनने नहीं पहुँचते लेकिन जमीन छिन जरूर जाती है।"[20]

शिवकुमार मिश्र का मत है कि गोदान ढहते हुए सामन्तवाद और उभरते हुए पूँजीवाद का आख्यान है।"[21] गोदान महाजनी दुश्चक्र में फँसे किसान की मजदूर बनने तक की प्रक्रिया का जीवित दस्तावेज है। यह मनुष्य की अपराजेय जिजीविषा और संघर्ष क्षमता की अद्भुत गाथा है। यह एक यातनामय जिन्दगी से उबरने की छटपटाहट और उससे उबर न पाने की विवशता की करुण कहानी है। यह परम्परा से सताई जा रही औरत की मुक्ति की आवाज है। आगे इनका कहना है कि प्रेमचन्द ने गोदान के राय साहब के मुँह से एक बड़े मार्के की बात कहलाई है कि यदि शेर को मीठी बोली बोलने से शिकार मिल जाएए तो उसे गरजने और गुर्राने की क्या जरूरत ? गोदान के राय साहब देशभक्त भी हैं। वे कहीं भी और कभी भी होरी के सामने नहीं आते, किन्तु उसके खेत, घर, जमीन-जायदाद सब कुछ नीलाम हो जाते हैं और सड़क की मजदूरी करते हुए वह मर जाता है। प्रेमचन्द यहाँ इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं कि शोषण की मशीन पहले से अधिक धारदार और घातक हो गई है। प्रेमचन्द का यह निष्कर्ष बदले हुए सन्दर्भों में सौ फीसदी सही है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 सितम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

गोदान और दलित विमर्श

समकालीन कुछ आलोचकों ने गोदान को दलित विमर्श के दृष्टिकोण से देखने का प्रयास किया है। दलित विमर्श का सीधा सम्बन्ध अम्बेडकरवाद और दलित चेतना से है। गोदान के प्रकाशन के समय तक अम्बेडकर महाड़ आन्दोलन कर चुके थे और गाँधी-अम्बेडकर के बीच पूना-पैक्ट भी हो चुका था। गोदान में सिलिया और मातादीन के प्रसंग में दलित जीवन के शोषण का जिक्र आता है। वैसे तो प्रेमचन्द गाँधी के अछूतोद्धार से प्रेरित थे लेकिन सिलिया-मातादीन के प्रसंग में कई आलोचकों को दलित विद्रोह की झलक दिखती है। सिलिया के परिवार द्वारा मातादीन के मुँह में हड्डी डालने और उसके जनेऊ तोड़ने को कई आलोचकों ने दलित चेतना माना है। आलोचकों के इस वर्ग का मानना है कि प्रेमचन्द यहाँ दलितों को अपने अधिकार के लिए हिंसा का सहारा लेते हुए दिखाते हैं और उन्हें इस हिंसा से विरोध भी नहीं है। इसका अर्थ है कि प्रेमचन्द यहाँ गाँधीवाद से दूर खड़े नजर आते हैं।

लेकिन प्रेमचन्द को लेकर सभी दलित आलोचकों के बीच मतैक्य नहीं है। दलित आलोचक डॉ. धर्मवीर ने प्रेमचन्द पर दलित दृष्टिकोण से विचार किया है। उनकी प्रेमचन्द पर दो पुस्तकें है 'सामन्त का मुंशी' और 'प्रेमचन्द की नीली आँखें।'

उनका मानना है कि गाँवों में दलित स्त्रियों का सवर्ण पुरुषों द्वारा यौन शोषण की बात प्रेमचन्द गोदान (मातादीन-सिलिया) में उठाते हैं। इसके अलावा बौड़म, घासवाली, मेरी पहली रचना आदि में भी उठाते हैं, लेकिन इसे और विषयों की तरह महत्त्वपूर्ण नहीं बनाते। प्रेमचन्द ने कई समस्याओं पर लिखा, लेकिन इस समस्या से अच्छी तरह अवगत होते हुए भी उन्होंने इस पर ज्यादा कुछ नहीं लिखा। इसका कारण डॉ.धर्मवीर बताते हैं कि प्रेमचन्द स्वयं जारकर्म में संलिप्त थे, इसलिए उनसे इस समस्या पर लिखने की उम्मीद बेमानी है। वे इस बुराई के मात्र जानकार नहीं थे, बल्कि इसके महत्त्वपूर्ण पात्र और घटक थे। मैं उन्हें साहित्यिक जमीन्दार कहना चाहता हूँ। वे अपने आलोचनाकर्म में बार-बार यह भी दुहराते हैं कि प्रेमचन्द दलितों के विरोधी थे। वे सामन्त के मुंशी थे। उनका कहना है कि प्रेमचन्द हिन्दू कौम की ख़ास राजनीति के प्रतिनिधि व्यक्ति एवं साहित्यकार हैं, जो समय के दबाव के कारण बदले हुए विचार पेश कर रहे थे और अपने मूल सामन्ती संस्कारों में ज्यों-के-त्यों डटे हुए थे। नामवर सिंह ने अपने एक व्याख्यान में बताया कि प्रेमचन्द समझ गये थे कि दलितों पर एहसान की जरूरत नहीं है। जब तक कि जात-पाँत की व्यवस्था नहीं तोड़ी जायेगी तब तक दलितों की मुक्ति नहीं होगी। इसलिए गोदान में पंडित मातादीन और सिलिया चमारिन का सम्बन्ध दिखाया गया है। सिलिया गर्भवती होती है और मातादीन की पिटाई होती है। मातादीन अन्त में कहता है कि मैं ब्राह्मण नहीं चमार ही रहना चाहता हूँ।"[22]

हालाँकि नामवर सिंह की स्पष्ट धारणा है कि जो लोग गोदान में केवल दलित विमर्श देखना चाहते हैं, वे गोदान की सम्पूर्णता की उपेक्षा करते हैं। प्रेमचन्द में केवल दलित विमर्श ढूँढ़ना और उसे गलत ठहराना ऐसा है जैसे अंधों का हाथी देखना।"[23]

निष्कर्ष

गोदान हिन्दी आलोचना की बहुचर्चित कृति है। इसके प्रकाशन से लेकर अब तक हिन्दी आलोचना में अलग-अलग दृष्टिकोण से

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 सितम्बर 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

मूल्यांकन होता आ रहा है। गोदान को लेकर मतभेद के जो बिन्दु शुरुआती दौर में थे वह बाद के दौर में और बढ़े। यह कहा जा सकता है कि गोदान में अभिव्यक्त व्यापक सामाजिक यथार्थ के कारण इसकी व्याख्या की इतनी अधिक सम्भावनाएँ उत्पन्न हुई हैं। भारतीय समाज के लगभग हर तरह के यथार्थ को गोदान में प्रेमचन्द ने पकड़ने की कोशिश की। जहाँ वे आलोचकों की नजर में सफल साबित हुए वहाँ आलोचकों ने उनकी प्रशंसा की तथा जहाँ वे चूक गए उस पर अब तक वाद-विवाद जारी है। गोदान के प्रकाशन से पूर्व हिन्दी आलोचना में उपन्यास के सन्दर्भ में महाकाव्यात्मकता एवं त्रासदी के स्वरूप पर कोई बहस नहीं हुई थी। आलोचना की इस बहस ने यह स्थापित करने का प्रयास किया है कि प्रेमचन्द गोदान के माध्यम से भारतीय महाकाव्य एवं पश्चिमी ट्रेजडी का विकल्प प्रस्तुत कर रहे थे।

समकालीन दौर में आधुनिक विमर्शों के मानदण्ड पर गोदान का मूल्यांकन होना इस रचना की महत्ता को उजागर करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 कुमार जैनेन्द्र, प्रेमचन्द : एक कृति व्यक्तित्व, नई दिल्ली, पूर्वोदय प्रकाशन, 1967

2 गोदान, (आलोचना) सम्पादक : राजेश्वर गुरु, नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, आवृत्ति : 2000 पृष्ठ 77-78

3 वही, पृष्ठ 78

4 शर्मा रामविलास, प्रेमचन्द और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौथी आवृत्ति, 2004, पृष्ठ 97

5 वही, पृष्ठ 97

6 वही, पृष्ठ 227

7 वही, पृष्ठ 231

8 राय गोपाल, गोदान : नया परिप्रेक्ष्य, पटना, अनुपम प्रकाशन, संस्करण : 2007, पृष्ठ 89 पर उद्धृत

9 वही पृष्ठ 89

10 राय गोपाल, गोदान : नया परिप्रेक्ष्य, पटना अनुपम प्रकाशन, संस्करण : 2007, पृष्ठ 26

11 वही, पृष्ठ 25

12 वही, पृष्ठ 15

13 गोदान, (आलोचना) सम्पादक : राजेश्वर गुरु, नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन आवृत्ति 2000, पृष्ठ 80

14 शम्भुनाथ, हिन्दी उपन्यास : राष्ट्र और हाशिया, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 41

15 शर्मा रामविलास, प्रेमचन्द और उनका युग, नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौथी आवृत्ति : 2004, पृष्ठ 232

16 सिंह नामवर प्रेमचन्द और भारतीय समाज, सम्पादक आशीष त्रिपाठी, नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 174

17 शर्मा रामविलास, प्रेमचन्द और उनका युग, नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौथी आवृत्ति : 2004, पृष्ठ 244

18 रामबक्ष, प्रेमचन्द और भारतीय किसान, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 176

19 शम्भुनाथ, हिन्दी उपन्यास : राष्ट्र और हाशिया, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 47

20 शर्मा रामविलास, प्रेमचन्द और उनका युग, नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौथी आवृत्ति : 2004 पृष्ठ 97

21 मिश्र शिव कुमार, प्रेमचन्द : विरासत का सवाल, नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 75

22 https://www.shabdankan.com/2017/03/premchand-remembrance-lecture-by-prof-namwar-singh.html

23 नामवर सिंह प्रेमचन्द और भारतीय समाज, सम्पादक आशीष त्रिपाठी, नयी दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 174